अध्याय : चतुर्थ

मानगढ़ आंदोलन पर लिखित अन्य साहित्य से तुलनात्मक अध्ययन

हिन्दी साहित्य में मानगढ़ आंदोलन को लेकर तीन कृतियों आ चुकी है।'घूणी तपे तीर' हरिराम मीणा कृत उपन्यास विधा की रचना हैं। 'मगरी मानगढ़' राजेन्द्र मोहन भटनागर कृत उपन्यास विधा की रचना है। जबकि 'मोर्चो मानगढ़' घनश्याम भाटी प्यासा कृत नाटक विधा की रचना है। यहां हम धूणी तपे तीर और मगरी मानगढ़ का तुलनात्मक अध्ययन करेंगे। इन दोनों रचनाओं में कई स्तरों पर समानता और विषमता देखने को मिलती है।

उपरोक्त दोनों रचनाओं में कई स्तरों पर समानता स्पष्ट होती है। जिनको कुछ बिन्दुओं के आधार पर समझने का प्रयास करेगें।

दोनों रचनाएँ ऐतिहासिक दृष्टिकोण को पुष्ट करती दिखाई देती हैं। इनमें मृतकों की संख्या में साम्यता हैं। जो करीब-करीब 1500 के लगभग है। हरिराम मीणा अपने उपन्यास धूणी तपेतीर में इस बात को स्पष्ट करते हैं कि -

> ''**निष्कर्षतः कुल मृतकों की संख्या करीब डेढ़ हजार बैठती हैं।**''[1]

दूसरी तरफ मगरी मानगढ़ के 'राजेश मोहन भटनागर' मृतकों की संख्या थोड़ी ज्यादा बताते हैं। इस बात को गोविन्द की दूसरी पत्नी के माध्यम से आंकड़ों को उल्लेख करते हैं - ''सरकारी रिपोर्टों के अनुसार मानगढ़ मगरी हत्याकांड में पन्द्रह सौ सत्रह व्यक्तियों की जानें गई। जिनमें केवल वयस्क व बुजुर्गों की गिनती की गई है। बच्चों की गिनती नहीं की गई। इसके साथ खेडापा गांव की तरफ जाने वाले मरे लोगों को भी नहीं गिना गया। जो अंग्रेजों की गोलियों से भी मरे और भगदड़ की वजह से घाटी में गिरकर भी मरें।''[2]

दोनों रचनाओं के प्रमुख पत्र गोविन्द गुरु है। जिन्हें इतिहास में 'गोविन्द गिरी' नाम से संबोधित किया जाता है। इन रचनाओं में केन्द्रीय घटनाक्रम में संपसभा और सम्य सभा नामक समिति के गठन की पुष्टि हुई है। सम्प सभा और सम्य सभा के साथ-साथ विभिन्न स्थानों पर धूणियों की स्थापना करना और भक्त बनाने के कार्य को प्रमुखता से दिखाया गया है। भक्तों का अपने गुरु 'गोविन्द गुरु' के प्रति असीम श्रद्धाभाव दोनों में दिखाया गया है। पूंजाधीरा और कुरिया दोनों पुरूषपात्र दोनों रचनाओं में गोविन्द गुरु के अभिन्न भक्त-मित्रवत सहयोगी रहे।

दोनों रचनाएँ आदिवासी समुदाय में जनजागृति लाने के लिए धूणीधामों की स्थापना को महत्व देती है। इन धूणियों पर सफेद ध्वजा फहराना एक नियम सा था। भक्त लोगों में आपसी भाईचारा रहे और पहचान बनी रहे। इसलिए गले में रूद्राक्ष की माला धारण करना भी दोनों रचनाओं में प्रमुखताः से दिखाया गया है। दोनों रचनाओं में गोविन्द गुरु को अंहिसा का समर्थन करने वाला बताया गया है। गोविन्द गुरु आदिवासी समुदाय में सुधार आंदोलन के प्रणेता रहे। वह धार्मिक व सामाजिक सुधार में अग्रणी रहे। बनजारा समाज में जन्म लेने गोविन्द गुरु आदिवासी समुदाय में चहेत समाज सुधार रहे। इनका जीवन मूलरूप से आदिवासियों को समर्पित है। बेगार प्रथा का विरोध करना और अन्याय के प्रति सचेतके के रूप में हमारे सामने आते है। क्रिमिनल ड्राइब एक्ट 1871 व वन अधिनियम कानून 1878 का जिक्र दोनों रचनाओं में है। जिनका आदिवासियों के पारम्परिक जीवन पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ा जिससे आदिवासी समुदाय दयनीय स्थिति में आ गया। गोविन्द गुरु इन दोनों अधिनियमों का विरोध करते है। इनके परिणामों को आदिवासी समुदाय पड़े प्रभावों प्रभावों के रूप में समझाया गया है तथा इन्हें समाप्त कर आदिवासियों को अपना परम्परागत अधिकार प्राप्त करने के लिए तैयार करते हैं।

दोनों रचनाओं में सत्ता द्वारा आदिवासियों के प्रति उपेक्षा भरा रवैया दिखाया है। जगह-जगह प्रताड़ित करना दिखाया गया है। भौगोलिक क्षेत्र में अधिकांश स्तर पर समानता

दिखाई देती है। क्योंकि दोनों रचनाओं की घटनाओं का मूल स्थान मानगढ़ पहाडी और इसके समीपवर्ती स्थल है। गोविन्द गुरु आदिवासियों ये जनजाग्रति पैदा करने के लिए वर्तमान राजस्थान के दक्षिणी अंचल व उससे सटे गुजराती क्षेत्रों में भ्रमण करते है। पुलिस प्रशासन की तानाशाही जिसमें घूणी धामों को अपवित्र करना सफेद ध्वजों को फाड़ना इन दोनों रचनाओं में समानता को दर्शाती है। पूंजा भक्त द्वारा मउरा के थानेदार की हत्या की पुष्टि भी दोनों रचनाएँ करती है।

कम्पनी सरकार व स्थानीय सरकार/राजाओं के विभिन्न सैन्य दल मानगढ पर एकत्र भीड को कुचलने के लिए प्रस्थान ऐतिहासिकता को पुष्ट करती है। जिनका उल्लेख दोनों रचनाओं में हुआ है।पिंटू कुमार मीणा ने डॉ.0 ब्रजकिशोर शर्मा के हवाले से लिखा है कि Between 6th to 10 Novemben,1913 two compnies of Mewar Bhil Cops,One compny of 104th wellesley's Rifles, one company of 7th Rajput regiment reached to suppress the assembly of Bhils on Mangrah hill.

1913 ई0 में 6 से 10 नवम्बर के मध्य मेवाड भील कौर की दो कम्पनियां, 104वीं वेलेसली के नेतृत्व में एक कम्पनी 7वीं राजपूत रेजिमेंटआदिवासियों को दबाने के लिए मानगढ़ की पहाड़ी पर पहुंच गई।

गोविन्द गुरु एक लेखक के तौर पर भी हमारे सामने आते है। उनके द्वारा रचित गीत 'नी मानू रे भूरेटिया' दोनों रचनाओं में स्थान पाता है। इसके साथ आदिवासी समुदाय में जगनागृति की अलख जगाने में अप्रतीम वस्तु धूणियों की स्थापना माना गया। इन धूणियों की पवित्रता का वर्णन हर जगह मिलता है। सम्य सभा/संप सभा के उद्देश्य दोनों रचनाओं में एक समान से है।

गोवन्दि गुरु के गरिमामय व्यक्तित्व बनाने में जिन लोग महत्वपूर्ण योगदान रहा हैं वे- दयानंद सरस्वती, कबीरदास और अपने अध्यात्मिक गुरु राजगिरी गोसाई से वे सर्वाधिक प्रभावित हुए।

''पुजारी बाबा मरते दम तक यह सीख देता रहा कि दारु

और तम्बाकू से आदमी का शरीर व मन दोनों खराब

होते हैं। मैं भी इसतरह की आदत को अच्छा नहीं मानता।''4

''कमाल यह कला यह कला किससे सीखी गोविन्द ?

''आप से गुरु जी!''5

इस प्रकार गोविन्द गुरु अपने गुरु सर्वाधिक प्रभावित थे। यह दोनों से स्पष्ट होता है। छपन्या अकाल का जिक्र दोनों रचनाओं में है। जिसमें गोविन्द गुरु अपने परिवार को बिछुड जाते है। उनकी पत्नी और बच्चे अकाल की भेंट चढ़ जाते हैं।

दोनों रचनाएँ तत्कालीन ऐतिहासिक वातावरण का उल्लेख कई स्तरों पर करती है। इन रचनाओं की आधार भूमि इतिहास की घटनाएँ है। ऐतिहासिकता का खुलापाठ चित्रित हुआ है। अंग्रेजी राज की स्थापना और उसके विभिन्न दुष्परिणामेां की व्याख्या करती सी प्रतीत होती है। दोनों रचनाओं में आपराधिक अधिनियम के दुष्यपरिणामों को दिखाने की कोशिश की गई। जिनमें दोनों लेखक काफी हद तक सफल हुए। हरिराम मीणा का उपन्यास का तो एक इतिहास की पुस्तक की तरह लिखा गया है फिर भी विशेष बात यह है कि लेखकीय दृष्टि अपनी जगह बड़ी महत्वपूर्ण है। जिसमें आदिवासी जीवन की साझी झांकी दिखाई देती है। राजेन्द्र मोहन भटनागर के उपन्यास मगरी मानगढ़ में भी आदिवासी समाज पर विहंगम दृष्टि डाली गई है।

दोनों रचनाओं में अंग्रेजी राज से मिले स्थानीय शासकों की नीयत की चिट्ठी खोली गयी है। दोनों रचनाओं में लगभग-पन्द्रह सौ आदिवासियों के शाहदत पाने का वर्णन हुआ है। अंग्रेजी सरकार द्वारा जंगलता विभाग खोला गया। जिससे आदिवासियों की जीवनचर्चा पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ा।

दोनों रचनाओं में गोविन्द गुरु को अंहिसा का पुजारी और मानव धर्म का पुरजोर वाकालत करते दिखाया गया है। गोविंद गुरु आदिवासी समुदाय का कल्याण करना चाहते, इंसानियत की जिंदगी जीना सीखाते है। आदिवासियों की गोविन्द गुरु के प्रति अपार श्रद्धाभाव है। जिस कारण स्थान-स्थान परभावी हृदयी नजर आते है।

''**गोविन्द गुरु की जय!**

गुरु महाराज की जय!!''[6]

''**जय गुरु महाराज**''[7]

दोनों रचनाओं में यह घटना मानगढ़ पहाडी पर घटित होती दिखाई है। नरसंहार के बाद गोविन्द गुरु की गिरफ्तारी पर दोनों रचनाएँ सहमत हैं। लेकिन दोनों रचनाएँ इस बात पर सहमत नहीं है कि गोविन्द गुरु अपना भील राज्य स्थापित करना चाहते थे।'[8] जबकि दोनों रचनाएँ इस बात पर सहमति जताती है कि देशीराज्य गोविन्द गुरु द्वारा 'भीलराज्य' की स्थापना संबंधी अफवाह फैला रहे थे। जिसमें काफी हद तक उनको सफलता मिली। इसी कारण गोविन्द गुरु को शटन कहता है। तुम भील राज्य स्थापित करना चाहते हो।

''तुमने भील राज्य बनाने के लिए यहाँ इन सबको बुलाया है टाकि टुम भील राजा बनकर यहां हुकुम कर सको।''[9]

''सभी शासकों ने यह सोचा कि गोविन्द गुरु की अगवाई में आदिवासी विद्रोह का बिगुज राजपूत-शासन के खिलाफ है। ऐसा करना आदिवासी राज की स्थापना का पूर्व संकेत माना गया है।''[10]

दोनों रचनाओं में वागड़ प्रदेश के आदिवासी समुदाय विशेषकर भील-मीणा समाज का चित्रण हुआ है। कहीं-कहीं गरासियों का भी जिक्र किया गया है। साथ ही साथ दोनों रचनाओं के नायक गोविन्द गुरु स्वयं बनजारा समाज से संबंध रखते हैं।

गोविन्द्र गुरु आदिवासियों में जनजागृति फैलाने का कार्य आरंभ करते हैं। सामाजिक स्तर उनके मध्य परस्पर भाईचारे की भावना का विकास करने का हरसंभव प्रयास करते हैं। इस कार्य को मूर्त रूप में देखने के लिए आदिवासी लोगों की एक समिति/संस्था गठित करते है। धूणीतपे तीर में संप सभा और मगरीमानगढ़ की सम्य सभा में नाम की भिन्नता है जिसका मूल उद्देश्य आदिवासी समुदायों में व्यापक स्तर पर सामाजिक सोंहार्द्र की भावना उत्पन्न करना था। आदिवासी समुदाय में नई चेतना पैदा करना था। इस संस्था के माध्यम से गोविन्द गुरु आदिवासी समुदाय में फैली सामाजिक कुरुतियों, रुढ़ियों और अंधविश्वास भरी भावनाओं का विरोध करते है। अदालती विवादों का निपटारा आपसी सलाह-मशविरा के माध्यम से करे अदालतों में उनका शोषण होता है। उनके साथ दोयम दर्ज का व्यवहार किया जाता है। न्याय भी निष्पक्ष नहीं होता है। अतः उनका बहिष्कार करे और आपसी विचार-विमर्श से झगड़ों का निपटारा करें। सम्प सभा का मूल उद्देश्य आदिवासी समुदाय में व्यापक स्तर चेतना की जागृति करना है। जिससे आदिवासी समुदाय में परस्पर भाईचारा, करुणा, अहिंसा, आपसी प्रेम और सौहार्द्रमय सहयोग के प्रति विश्वास बढ़े।वस्तुतः आदिवासी समुदाय और संप सभा/सम्य सभा में अतःसंबंध है। जिसका दोनों रचनाओं में स्पष्ट चित्रण हुआ है।

आदिवासी समाज में व्यापत विभिन्न सामाजिक कुप्रथाओं का चित्रण दोनों रचनाओं में हुआ है यथा डायन प्रथा, भूत-प्रेत का साया, भोपाओं द्वारा भूत-प्रेत का साया निकालना, जादू-टोना व झाड़-फूंक इत्यादि। आदिवासी समुदाय का प्रकृति प्रेम व उसके साथ मित्रवत व्यवहार और सामाजिक व्यवहार मे इसका योगदान इत्यादि की चर्चा दोनों रचनाओं में देखने को मिलती है। आदिवासी समुदाय की सबसे बड़ी समस्या मदिरापान का जिक्र भी दोनों रचनाओं में हुआ है उससे बड़े पैमाने पर कुप्रभावों का भी जिक्र हुआ है।'धूणी तपेतीर' में भीलड़ देव के थान पर एक अधेड व्यक्ति की आलाप इस बात की पुष्टि करती है। तो दूसरी तरफ 'मगरी मानगढ़' में गनी शराब पीने वाले लड़के से विवाह नहीं करने की बात कहती है।

आदिवासी समुदाय में विवाह करने में स्त्री को स्वतंत्रता प्रदान है। वह अपने मनपसंद के योग्य वर का चयन कर सकती है। विवाह से पूर्व रस्मों के लिए पसंद और नापसंदगी पर स्त्री का निर्णय ही मान्य होता है। धूणी तपेतीर में नंदू और कमली का प्रेम इसका जीता जागता उदाहरण है। मगरी मानगढ़ में बदली और गनी का गोविन्द गुरु के साथ प्रेम संबंध इसकी पुष्टि करता है। हाँ गोविन्द गुरु के प्रति प्रेम संबंध साधू मर्यादा के खिलाफ अवश्य है लेकिन जो अंतर से फूटता है उसका कोई दूसरा विकल्प नहीं। नंदू को खाना परोसने वक्त कमली का जागरुक व्यवहार और कमली द्वारा गोफन से नंदू पर कंकड फेंखना अंतर का खुला जुड़ाव दिखाई देता है।

वहीं मगरी मानगढ़ में बदली द्वारा अपनी लाल रंग की ओढ़नी को हवा मैं लहरा देना ओर उसे पता तक नहीं रहता कि क्या कर रही है? दूसरी तरफ गनी द्वारा गोविन्द गुरु से आत्मिय प्रेमभरा वर्तालाप इत्यादि ऐसे उदाहरण है जिनसे स्पष्ट होता है कि आदिवासी समाज में वर पक्ष चुनने का अधिकार था।

> **''ये संभालों पुड़िया। फांक जाओ। ऊपर से गरम-गरम दूध चढ़ा जाओ। ताप कम हो जाएगा। तीन चार पुढ़िया में ताप छुमंतर फिर भले चंगे। एकदम गबरु। ..... फाँकों न''**[10]

दोनों रचनाओं में आदिवासी विपन्नता का भी विवरण दियाग या है। आदिवासी समुदाय छोटी-छोटी झोपड़ियाँ में निवास करता है। पहनने तथा ओढ़ने के कपड़े भी कम होते है। प्रकृति से प्राप्त सामग्री से अपना जीवन यापन करते है।तथा पशुओं के प्रति गहरा प्रेम भाव होता है। कह सकते है कि आदिवासी सामज पशु-पेरमी होते है। धूणी तपेतीर उपन्या समें'दल्ली का बकरिया चराना और दल्ली के साथ अनहोनी घटना हो जाने के बाद जब बकरियाँ अकेली ही पाँच्या की झौपडी के आंगने में पहुँचती है लेकिन दल्ली के न होने से

उनकी आँख नम हो जाती है।'[11] मगरी मानगढ़ में गोविन्द की माँ कहती है कि गोविन्द का पढ़ना लिखना बंद किया जायेगा, अबवह अपना सारा ज्ञान बकरी और गायों को चराते हुए प्राप्त करेगा वही वास्तविक ज्ञान होगा।

''अब थे धवरी गाय से ज्ञान पायेगा..... वे भी चार है
पाँचवी पीली जवान गाय है। बकरी अलग। उनहें चरायेगा
और उन जैसा मलूक ज्ञान पाएगा।''[12]

सामाजिक स्तर आदिवासी समाज देशी शासकों से प्रताड़ित भी होते थे। उनका आर्थिक शोषण किया जाता। देशी राज्यों द्वारा कर वृद्धि भी इन समाजों के लिए बड़ी मार थी। दोनों रचनाएँ आदिवासी समाज का सांगोपांग चित्रण करती है। जिसमें उनकी विभि परम्पराओं का यथासंभव उल्लेख होता गया है।प्रकृति प्रेम, पशु प्रेम, आत्मीयभाव, मिथकों और कुल देवी देवताओं के प्रति गहरा लगाव और श्रद्धामय भावों को स्पष्टतः उल्लेख हुआ है। यह समाज ऐसा समाज है जिसके पास अपनी अखंड सामाजिक परम्परा है। जिसमें रहते वह अपने दुःखों को भूल जाते है। रमणिका गुप्ता का यह कथन अधिक उचित प्रतीत होता है।''हम एक ऐसा समाज, जिसके मूल्यों का न ह्रास हुआ है, न ही उमें विकृति आई है। हम सामूहिक जीवन प्रणाली में जीते रहे हैं, समाज और समूह में रहते हैं, तुम्हारे द्वारा दी कठिन जिंदगी को हम अपने गीतों और नृत्यों से भुलाते रहें हैं।''[13]

धार्मिक स्तर पर दोनों रचनाओं में एकमत दिखाई देता है। भगवान शिव को आदिवासियों में पुरखों से पूजा-मनाया जाता है। शिव को उनका परम्परागत पूज्य आदि देव माना गया है। गोविन्द गुरु आदिवासियों के मध्य शिव को महत्वपूर्ण देव-भगवान बताते हे। आदिवासी भी इस बात पर विश्वास करते है कि भगवान शिव उनके लिए अच्छा करेंगे जिनसे उनकी जिंदगी में बदलाव आयेगा। दोनों रचनाओं में गोविन्द गुरु की एक ब्राह्मण महाशय से

हुई। जिससे वह अपने गुरु के बहुत प्रिय शिष्य है और दुनियां का विशेषकर आदिवासी समुदाय में चेतना जागृत कर दुःख हरण वाला बनाया गया है। गोविन्द गुरु अपने सम्पूर्ण जीवन को आदिवासी जीवनचर्या सुधार में समर्पित करते है। गोविन्द गुरु मुख्य रूप से अंहिसा के पुजारी थे। गोविन्द गुरु बचपन में ही जीव के दया दिखाते आए। यदि हम जीव को मारते है तो अगले जनम में उसी योनी में जन्म लेकर उसी जीव की भांति मरना होगा।

''किसी भी जीव को बेवजह मारना पाप है।''[14]

छोनों रचनाओं में गोविन्द गुरु धार्मिक प्रवृति के घटित है। वे कबीर, रेदास आदि निर्गुण उपासक संतोमहात्माओं से प्रभावित थे। उनसे प्रभावित होने के कारण वे अंधविश्वास व जादू-टोना में रत्ती भर भी विश्वास नहीं करते थे। उनका मानना था कि इनसे व्यक्ति का तन और मन तो खराब होता हि है साथ ही समाज की भी दुर्दशा होनी शुरू हो जाती है।'धूणी तपेतीर' में हरिराम मीणा सेंगा जी के माध्यम से कहलवाते है कि जादूगर लोग अत्याचार करते है। अपना स्वार्थ साधते है। इनकी नियति और कर्म दोनों बुरे होते है।

"ये जादूगर लोग बुरे व अत्याचारीराजा. महाराजा है सूदखोर महाजन है और विलायती फिंरगी है।"[15]

ये जादूगर लोग समान्य लोगों को जाल में फंसा लेते हे फिर उन्हें कलपाते रहते ह। इसलिए आप लोग जादूगरों की चालबाजी को समझो और उनसे बचने की पूरी तन्मया से कोशिश करो। इनके जादू-टोने से छूटकारों से प्राप्त करें।

"बुरे इन्सान के जाल की पहचान करो व इनके जाल से छूटने का प्रयत्न करो।"[16]

'आप लोग इन मंत्र-तंत्र, जादू-टोनों में विश्वास न जताये। इनसे हमारा समाज बरबाद हो रहा है इन्हीं अंधविश्वासों का परिणाम है कि हमारा समाज इतने वर्षों के उपरान्त वहीं का

वहीं है जहां शुरूआत में था।'[17] इसलिए जादू-टोना पर विश्वास नहीं करें। स्वयं और स्वयं के घरों को शुद्ध करने के लिए घी व नारीयल का हवन करे। जिससे बुरी आत्माएँ, बुरे विचार स्वतः ही दूर हट जाते है। चहुँ ओर खुशीलहाली का वातावरण निर्मित होने लगता है। अपने संस्कारों को उत्कृष्ट बनाओं और अपने बच्चों में भी अच्छे संस्कार भरे का भरसक प्रयत्न करो। भजन कीर्तन में हिस्सा ले उसके सद्गुणो को धारण करें।'

"अपने बच्चों में संस्कार पनपाओं संस्कार देने वाले लोगों से गाँव-गाँव में कीर्तन कथा और अच्छी बातें सीखो।"[18]

गोविन्द गुरु ने आदिवासियों को शिक्षा का महत्व समझाया।उन्होंने शिक्षा पर सबसे अधिक बल दिया। उनका मानना था कि स्वयं का विकास करने का एक मात्र उपाय शिक्षा ही है। जिससे व्यक्ति में अच्छे और बुरे की तुला करने की विवेक सम्मत बुद्धि का विकास हो जाता है। परिणाम स्वरूप वह अपनी जिंदगी के फैसले लेने खुद ही शुरू कर देता है।

> **''पढ़ाई लिखाई के महत्व को समझो। मैं स्कूल नहीं पढ़ा,**
> **लेकिन इधर-उधर आखर ज्ञान सीख लिया। तुम भी सीखो।**
> **बच्चों को पढ़ाओं। तभी वे समझदार बनेंगे। गाँव-गाँव मे**
> **जो पढाओ लिखा हो, उसका धर्म है कि अन्य लोगों को पढ़ावे।''[19]**

गोविन्द गुरु ने आदिवासी समुदाय को धर्म और सत्य के मार्ग से अवगत कराया ईश्वर पूजा, परस्त्री गमन, चोरी, धोखाधड़ी, शत्रुता व वैमनस्य रूपी भावों को पूर्णतः त्याग और पारिस्परिक प्रेम को बढ़ावा देना, अन्य लोगों को सोहदर भ्राता मानते हुए आदर सत्कार करें, शांतिमय जीवन जीने का प्रयत्न करें। जीवन में समृद्धि लाने के लिए कृषिकर्म को ईमानदारी के साथपूर्ण करें, जादू-टोना की गिरफत में न आये। ये लोग चक्कर में डाल देते है उनसे बचने के लिए धूनियों पर जाए उसे पवित्र रखे, जगह-जगह ध्वजा पहराएँ ओर उनकी पूजा करें। इत्यादि शैक्षिक वार्ताएँ दोनों विवेच्य रचनाओं चित्रित हुई है।

दोनों रचनाओं में गोविन्द गुरु के दीक्षा गुरु रामगिरी गोसाई है। राजगिरी गोसाई की शिक्षा का प्रभाव था कि, गोविन्द गुरु अपने प्रारंभिक जीवन में गोविन्द नाम से जाने जाते थे अब गोविन्द गुरु कहलाने लगे। दोनों रचनाओं में गोविन्द गुरु अपने गुरु के चहते शिष्य है। समय अन्तराल पर गोविन्द गुरु ने अपने ज्ञान क्षेत्र को विस्तृत किया। अब वे स्वामी दयानंद सरस्वती के सम्पर्क में आए। दयानंद सरस्वती के ज्ञान से प्रभावित होकर उन्होंने भारतीय पुरातन 'संस्कृति की रक्षा करने की ठानी। स्वदेशी आंदोलन के हिस्सेदार बने। स्वदेशी का प्रचार-प्रसार किया। भारतीय पुरातन संस्कृति की परम्परा में रहते हुए धूणी स्थापना व यज्ञ कर्म संपन करने लगे। अपने भक्तों के लिए रूद्राक्ष की माला पहने के नियम बनाया। भक्त लोगों की पहचान के लिए वेशभूषा पर ध्यान दिया। अपने गुरुत्व दायित्व को ध्यान में रखते हुए तीन बातें स्वयं के लिए आवश्यक थी।

''**शिष्यों का उत्थान, गुरु मंत्र व गुरु की शिक्षा**''[20]

'उनका मानना था कि भक्त ही बड़ा है। भगवान भी उनसे छोटे है। उनको माने वाला ही, उनकी पूजा अर्चना करने वाला ही सबसे बड़ा है। इसलिए आप ढोंगी लोगों के चक्कर में मत आओ। जादू आदि कुप्रवृत्तियों से बचो। आप ईश्वर को मानते हो तो ईश्वर से बड़े हो।'[21]

गोविन्द गुरु अपने भक्तों को आनुभूतिक ज्ञान की गरिमा समझाते थे क्योंकि आनुभूति ज्ञान ही सच्चा ज्ञान है। वह चेतन्य है। आत्मा से जुड़ा हुआ है। उससे हमें शक्ति मिलती है। उसी शक्ति के सहारे यह चराचर जगत नित्य गमिमान है। अतः उसी का संयोग से। अंधविश्वासों से दूर रहें। आनुभूतिक ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न करे। उनका मानना था कि -

क्योंकि अनुभूति जन्य ज्ञान ही सच्चा ज्ञान हे। वह चेतन्य है।आत्मा से जुड़ा हुआ है। उससे हमें शक्ति मिलती है। उसी शक्ति के सहारे यह चराचर जगत नित्य गतिमान है। अतः उसी का संयोग रखे। अंधविश्वासों से दूर रहें। आनुभाविक ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न करे। उनका मानना था कि -

''जन अंधविश्वास का शिकार होता है और ठगा जाता है।''[22]

गोविन्द गुरु अपने भक्तों में शिक्षा का प्रचार करने हेतु पाठ्यशालायें खोलते है। उनका शिक्षा के प्रति लगाव है। धूणी तपेतीर में गोविन्द गुरु जगह-जगह धूणी धामों की स्थापना करते है। जिनका मुख्य उद्धेश्य आदिवासी समाज में जाग्रति पैदा करना है। जिससे वह अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो सके। सामन्ती तत्वों द्वारा किये गए हस्तक्षेप का विरोध कर सके। अपनी वासतविकता की पहचान कर सके। बेगारी और अनियंत्रित कर व्यवस्था का विरोध कर सके। मगरी मानगढ़ का मानामीणा इस संदर्भ कहता है -

''कभी म्हाने पाठ्शाला चलाने की कोशिश की थी। सामंतों के कान खड़े होगए थे। वे डरने लगे थे और उन्होंने पाठशाला बंद करवादी थी। अब अपने गुरुमहाराज गोविन्द जी की कृपा कृपा से फिर पाठशाला शुरू करने जा रहा हूँ।''[23]

प्राचीनकाल से जंगलों में वास करने वाला आदिवासी समाज अपने परम्परागत पूज्य भगवान और देवी-देवताओं को मनाता आया है। इन रचनाओं में आदिवासी पुरखों से आदिदेव महादेव को अपना इष्ट और आराध्य देव मानता है। भोलेनाथ ही सब कुछ है। किसी खुशी के सांझेदार भोलेनाथ है तो किसी गमीया उलाहेना के भागीदार भी भोलेनाथ ही है। रूपा जी द्वारा गाया गया गीत

''ओ.....
शिव पार्वती में हुई लड़ाई
भाई वन रेवासी हो जी....।''[24]

इसी के बरक्स भटनागर जी ने माना मीणा के माध्यम से बताया कि भोलेनाथ ही आदिवासियों के देव है। जिनकी स्तुति में एक भजन इस प्रकार है -

''आगे तो बाबा ने पीछे औ पार्वती

नंद्या री असवारी चाल्या आवो ओ महादेवजी।''[25]

दोनों रचनाओं में राजनैतिक स्तर भी समानता मिलती है। दोनों रचनाओं में तत्कालीन रियासतों डूँगरपुर बांसवाड़ा, सूथ-ईडर, संतरामपुर के महाराणाओं व महारावलों का उल्लेख हुआ है। इनके साथ विभिन्न सामन्तों का उल्लेख किया गया है। इन रियासतों के साथ-साथ ब्रितानी हुकूमत के क्रियाकलापों की जानकारी स्पष्ट हुई है। कम्पनी सरकार के अंग्रेज अधिकारी सहायक एजेंटों, कैप्टनों और अन्य कर्मचारियों का उल्लेख हुआ है। सरकारी महकमों द्वारा आदिवासी समाज पर किए गए अत्याचारों का भी उल्लेख हुआ है। अंग्रेजी अधिकारियों व राजामहाराजाओं द्वारा राजनैतिक षड़यंत्रों का उल्लेख हुआ है।

भारतीय इतिहास की एकमहत्वपूर्ण घटना भूमि संबंधी नये कानून-कायदे बनाना है। जिसका कत्र्ताधत्र्ता लार्ड कार्नवालिस था। उसने भूमि के स्थायी बंदोबस्त को लागू किया। जिसका परिणाम यह हुआ कि सदियों से अपना अधिकार मानकर, सदियों से जमीन के साथ आत्मीय जुड़ाव रखने वाला यह समाज जमीन से बेदखल होने लगा। जमीनी जुडाव खत्म होने से झूंमिग कृषि की परम्परा खत्म होने लगी। आदिवासियों पर लगान बढ़ाने आरंभ हुए। उनके जीवन में परेशानियाँ आरंभ हो जाती है। अब आदिवासी समाज के लोग किसानी जीवन छोडने पर मजबूर हो जाते है। क्योंकि बढ़ा लगाने नहीं चुका जाते और श्रमिक बन जाते है। 1871 ई0 में ब्रिटानी हुकूमत आपाराधिक अधिनियम बनाती है। जिससे आदिवासियों के जीवन पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ता है। इस अधिनियम में 14 से अधिक आयुवर्ग के व्यक्ति को थाने में उपस्थिति दर्ज करानी पड़ती थी। इस अधिनियम का प्रभाव यह हुआ सीधे-सीधे आदिवासियों पर जुल्म ढोने शुरू हो गए। थानों में उन्हें अपमानित किया जाता उनके साथ बुरा व्यवहार किया जाता था। उनको मानसिक रूप से प्रताड़ित किया जाता था।

ब्रितानी हुकूमत द्वारा 1878 ई0 में बनाया 'वन अधिनियम कानून 1878 बड़ा धांसू कानून था। इस अधिनियम को लागू कर ब्रिटानी हुकूमत ने वनोपज के एकत्रण व व्यापार पर पाबंदी लगा दी। इसका परिणाम यह हुआ कि आदिवासी समाज अंग्रेजों को शोषकों की दृष्टि से देखने लगे। सदियों से वनों में रहता और वनों से ही जीवन यापन करने वाला समाज आज कानून के पिंजरे में बंद हो गया। जिस वन से आदिवासी समाज परम्परागत भरण-पोषण करता था। अब वही समाज अंग्रेजों का मुंह ताकने लग गया। जिस वन पर उनका पुस्तेनी हक था। इसी पुस्तेनी हक को प्राप्त करने और अपने अधिकारों को पुनः प्राप्त करने के लिए आदिवासियों के मसीहा गोविन्द गुरु अपना जन जागृति आंदोलन आरंभ करते हैं। उनका जनजागृति आंदोलन प्रारंभिक दौर में सामाजिक धार्मिक आंदोलन था। जो धीरे-धीरे राजनीति से जुड़ता गया और अन्ततः आर्थिक पहलुओं पर आ टिक जाता है। क्योंकि राजनीति को प्रभावित करने वाला करकों में सबसे अधिक वर्चस्व रखने वाला कारक आर्थिक कारक है। इन उपरोक्त बिंदुओं का उल्लेख दोनों रचनाओं में प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप से हुआ है। देशीराज अपने शासन को कायम रखने के लिए ब्रिटिश सरकार को सहयोग की अपेक्षा रखती है।

देशी राजाओं-महाराजाओं को यह डर सताने लग गया कि गोविन्द गिरी/गुरु भील आदिवासियों के सहयोग से 'भील राज्य' की स्थापना करना चाहते हैं। महरावल शंभू सिंह का यह कथन देशीमहाराजाओं के भय को स्पष्ट करता है -

''वैसे तो सब ठीक चल रहा है, लेकिन गोविंद बनजारा
की हरकते हमारे राज्य मे भी फैली रही है।"[26]

दूसरी तरफ अंग्रेज सरकार देशी राज्यों के आधार पर गोविन्द गुरु को सत्ता परिवर्तक के रूप में देखती थी। जय सिंह का यह कथन स्पष्ट करता है -

''याद रहे कि कभी मेवाड़ और हाडौती साम्राज्य, भीलों के पुरखों

का ही था। स्वामीगोविन्द गिरी भीलों के मन में वही सोचा हुआ सपना जगा रहे हैं। अंग्रेज सरकार इसे भील संगठन का सत्ता परिवर्तन का प्रयास मान रही है।''[27]

इस प्रकार देशी राज्यों को और अंग्रेजी हुकूमत को भय था कि गोविन्द गुरु आदिवसियों को भड़काकर कहीं अपना राज्य कायम नहीं ले।इसलिए दोनों पक्षों ने संकीर्ण विचार को त्यागना श्रेयस्सकर समझा।

'गोविन्द गुरु अपना भील राज्य खड़ा करना चाहते है। देशी राज्य इस हेतु अंग्रेजी हुकूमत से सहयोग की अपेक्षा रखते हैं इसलिए दोनोंपक्ष परस्पर सहयोग करेंगे। इस कार्य हेतु संधि भी की गई जिसमें दोनों का एक दूसरे के प्रति वफादार रहना और आवश्यकता पड़ने पर सहयोग अपेक्षित था।'[28]

दोनों रचनाएँ इस बात पर भी सहमत है कि गोविंद को पकड़ना और उनके द्वारा चलाए जा रहे सुधार कार्यों पर रोक लगाना सत्ता का मुख्य ध्येय था। इस कार्य को अंजाम देने हेतु विभिन्न कार्यों को सम्पन्न किया गया। गोविंद गुरु को एक बार पकड़ कर काल कोठरी में डाला गया। आदिवासी जनता द्वारा विरोध किए जाने पर उनहें जेल से मुक्त किया गया। फिर दूसरी बार जेल लाने के लिए विरोध करने वाली आदिवासी जनता को मानगढ़ पहाड़ी पर हथियारों से कुचला गया और गोविन्द गुरु को गिरफ्तार कर लिया गया। कोर्ट के फैसले में उन्हें कुछ शर्तों के साथ रिहा कर दिया जाता है। इन समस्त क्रियाकलाओं के पीछे आदिवासी समाज को बिखेरने और ब्रिटानी हुकूमत ए.जी.जी. कैप्टन स्टाक्ले,पीटरसन, वेलेसली आदि अंग्रेज अधिकारी आदिवासियों के हक की चुनौति को बेरहमी से कुचल देते है और अपनी निष्ठुर वीरता का परिचय देते हैं। वस्तुतः कहा जा सकता है कि गोविन्द गुरु द्वारा शुरू किया गया सामाजिक धार्मिक सुधार आंदोलन अन्ततः राजनैतिक आंदोलन में हो परिणत हो गया। जिसके पीछे के वभिन्न कारणों की पुष्टि दोनों रचनाएँ समान स्तर पर कर रही है।

किसी देश-समाज, जाति के आचार-विचार का सम्मिलित स्वरूप ही संस्कृति है। आचारण से भौतिक सभ्यताएँ प्रभावित होती है और पहचानी जाती है। उनके रहन-सहन के तौर-तरीके विवाह संस्कार व उनके जीवन को प्रभावित करने वालेअन्य संस्कार और व्यवहार सम्मिलित होते हैं। विचार किसी दर्शन अथवा वैचारिक का क्रमशः व्यवहार ही विचार हे। विभिन सामाजिक प्रथाएँ और रीति-रिवाज, आचार-विचार में समायोजित है। जिन्हें अलग-अलग नहीं कर सकते। दोनों रचनाओं में सांस्कृतिक स्तर पर कई स्तरों पर समानता है। इन रचनाओंमें वागड़ प्रदेश की लोक संस्कृति का सांगोपांत्र चित्रण हुआ है। आदिवासी समाज के रीति-रिवाजों, परम्पराओं, प्रथाओं उनके धार्मिक व सामाजिक आचारणों सहित लोक जीवन की झांकियों को समेटते हुए समूचे लोक सांस्कृतिक परिवेश को उजागर करने वाले विभिन्न आचरणिक व्यवहारों का इन दिनों रचनाओं में स्पष्ट उल्लेख हुआ है। कुछ परम्पराएँ पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलते अपने वास्तविक स्वरूप को त्याग देती है। उनमें विकृतियाँ आ जाती है। जिससे वे रुढ़ियाँ कहलाने लग जाती है। इन रुढ़ियों से समाज का प्रत्येक हिस्सा प्रभावित होता है। जिससे सामान्य तौर पर चलने वाला जीवन अस्त-व्यस्त होने लगता है। अनेक बुराइयाँ पनपने लग जाती है। जिससे आम नागरिक का जीवन बाधित होता है। जीवन का मिठास कम होने लगता है। जीवन यंत्रवत होने लगता है। जिसपर पाबंदी-सी जकड़न महसूस होती है। लेकिन रुढ़ियों के प्रभाव से इन समस्त बातों को समझ नहीं पाता। गोविन्द गुरु आदिवासी समाज में फैली इन्हीं रुढ़ियों को बाहर निकालने के लिए अपना जनजागृति अभियान चलाते है। जिसका खुला-चित्रण दोनों रचनाओं में मिलता है।

आदिवासी परम्परा लोक परम्परा है। यह लिखित कम मौखिक अधिक है। इस परम्परा में मिथकों का संयोग है। मिथक लोक मानस की आदिय सभ्यता से जुड़ा है। जिसमें आदिधर्म, विज्ञान कला, विचार, दर्शन इत्यादि शामिल होते है।डॉ.0 नगेन्द्र का मानना है कि -

‘‘मिथक मानव की चेतन शक्ति की बजाए अचेतन शक्ति का संबंल है। जिससे चराचर जगत के प्रत्यक्ष और परोक्ष व्यवहार संचालित और कुछ स्तरों पर भी नियंत्रित होते है।’’[29]

यह मिथक हमें इस बात से आश्वस्त कराते हैं कि आदिवासी समाज की जड़े बहुत गहेरी है। क्योंकि आदिवासी समाज में कई मिथकीय कथाएँ प्रचलित हैं। जैसे प्रेत विद्या का उल्लेख और मकना हाथी की कथा। दानों कथाएँ पापाचार को नष्ट करने वाली है। हाँ प्रेत विद्या से सचेत रहने की बात अवश्य कही गयी है। थकना हाथी की कथा के माध्यम से ईश्वरीय कल्पना द्वारा भोले-भाले इंसानों का अंधविश्वास से प्रात दुःखों से मुक्ति का मार्ग बताया गया है। मेगड़ी विवाह और भैमाता का क्रियाकलाप और संसार की निर्माण प्रक्रिया से संबंधित अन्य विभिन्न मिथकीय कथाओं का भी उल्लेख हुआ है।

‘मगरी मानगढ़’ उपन्यास में भी स्थान-स्थान पर आदिवासी समुदाय की लोक परम्पराओं की अभिव्यक्ति हुई है। लोक गीत, लोकोक्तियाँ, कहावतें आदि भी यथासंभव स्थान पाते हैं। गोविंद गुरु का इसाई धर्म पर वार्तलाप अपने आप में अनूठा प्रयोग है।

“उपन्यास मगरी मनगढ रूगोविन्द गिरी में भी आदिवासी लोकगीतों, कहावतों,लोकोक्तिओं, तथा मिथकों आदि का उल्लेख हुआ है। गोंविद गुरु ईसाई धर्म प्रचार को रोकने के लिए लोकोक्तियों व कहावतों का प्रयोग करते है ”[30]

आदिवासी समाज प्रकृति के सामजस्य रखता हुआ अपना रंगीन जीवन जीता है। इस समाज में विभिन्न उत्सव-त्योहार आते रहते ह। सामूहिकता ही आदिवासी की मुख्य पहचान है। वर्ण और जाति जैसी व्यवस्था से मुक्त होने के कारण सभी जन एकसाथ उठते-बैठते, खाते-पीते उत्सव त्योहार मानते हुए रिश्ते-नाते करते है। आदिवासी समुदाय में स्त्री को थोड़ी ज्यादा स्वतंत्रता होती है। हालांकि परिवार का मुखिया तो अधिकांश स्तर पर पुरूष ही होता

है। लेकिन पारिवारिक निर्णयों में स्त्री की सहमति ली जाती है। मेलों त्योहारों में लोगों का एकत्र होना, युवक-युवतियों का आकर्षण और भागकर पहाड़ पर चढ़ना, समाज के पंचों का विवाह हेतु निर्णय आदि क्रियाएँ उनहें अन्य समाजों से भिन्न दर्शाती है।यहाँ पुरूष वरण की बात स्पष्ट होती है। धूणी तेपतीर में लाखा बनजारा की पुत्री का प्रेम, नंदु और कमली का प्रेम आदि इसके जीते जागते उदाहरण है। दूसरी तरफ 'मगरी मानगढ़' में बदली का और गनी का गोविन्द गुरु के प्रति प्रेम अपने आप में पुरूष वरण का खुला चित्रण हुआ है।

स्त्री स्वयं को सजाने संवारने में कुछ ज्यादा रमती हैं। आदिवासी समाज में आज भी लड़कियां और स्त्रियां सजना पसंद करती है। किसी मेले और त्योहर पर यह गतिविधियाँ ज्यादा स्तर पर देखने को मिलती है। मार्गशीर्ष पूर्णिमा के दिन भरने वाले मेले में आदिवासी लोग सजधज कर आये। औरतों ने कुछ ज्यादा ही श्रृंगार किया।'उनके हाथों में चांदी के गजरे व चुडे थे, लाख की चुडियाँ, नारियल के कासले, साथ ही अन्य अंगो पर कुकड़ विलाम, के मोरिये पहने, लाख की कामली,घूंघरीदार चाँदी की बगड़ी, कंकणी और कासली पहन रखी थी। बाजुओं के श्रृंगार में बाजूबंद, चूड़ा (लाख का) उंगूली में चांदी की अंगूठी व अन्य अंगुठियाँ पहनी हुई थी। कुछेक औरतों ने चांदी वाले हथफूल पहन रखे थे। सिर पर बोरला (चांदी का) और बालों में राखड़ी गुंथी हुई थी। कुछेक औरतों ने हथफूल भी पहने। बालों में फंदा सिर से लेकर ऐडी तक पहना हुआ था। झेले और बेडले कानों में पहन रखा था। युवतियाँ चोली में चांदी के बटन लगा कर आई। कुंवारी कन्याओं और सधवा महिलाओं ने लाल चुनड़ी राती कापड़ी और लाल घाघरा पहने हुए थी। विधवाओं ने बोरला, बाजूबंद व पैर की कड़ी को छोड़कर सभी आभूषणों से सज्जी हुई थी। पुरूषों ने हाथों में चांदी के कड़े पहे कानों सोने की मुरकी, भयरकड़ी, बाजू में भोरिया, कमर में कंदरो, गले में आहड़ी आदि आभूषण पहन रखे थे।

आदिवासी समुदाय में लोक गीतों का बहुत अधिक महत्व है। प्रत्येक त्योहार पर एक न एक गीत गाया जाता है। लोकगीत उनके जीन की झांकी है। जीवन का मीठास है, जीवन का लोकरंजन कर्म है। जिससे वह अपने दुःखों को भुलाते है और कर्मशील जीवन में खुश रहते हैं। मेले के अवसर पर पादुकचाला नृत्य के गीत -

''काली रे कायलड़ी ते वन बगड़े ने गयी ती रे
वन बगड़ा मे रेती वनफल वेणी खाती रे....।''[31]

'मगरी मानगढ़' में पूजा का यह गीत आदिवासी लोगों को गमों को भुलाता हुआ सहारा प्रदान करता है तो दूसरी तरफ सभी को आनंद विभोर कर देता है -

''मारू देश ते रूपालू रे संकू सरवर
मारू देश के वाए भील देश सँकू सरवर।''[32]

इसप्रकार कहा जा सकता है कि आदिवासी समाज की संस्कृति बेहद रंगीन संस्कृति है। इसका संसार बड़ा विस्तार पाया हुआ है। जिसमें प्राकृतिक सौन्दर्य और प्रेम-नृत्य-गीत, मेलों में खिलता उत्साही जीवन, कलात्मक अभिव्यक्तियाँ, धार्मिक आस्थाएँ, मिथको मे रमती लोक गाथाएँ, सामाजिक संस्कारमय व्यवहार और क्रियाएँ, गणचिह्न, पहेली मुहावरे, जीवन की झांकी दिखाते खेल-कूद, मनोरंजन भरी अन्य क्रियाएँ, शिष्ट समाजों की भांति फुरसत के क्षणों में वस्तुएँ न भरने वाली यह संस्कृति सम्पूर्ण जीवन चर्या है जिसमें उनका आचरण, विश्वास, धर्म और मनोविज्ञान, सिद्धांव और परम्पराओं का साझासंगम, साथ ही मूल्य व्यवस्था से अपनत्व रखने वाली क्रियाशील सहज जीवन की भाव भरी भंगिमायुक्त अभिव्यक्तियाँ है।''[33] अतः बागड़ प्रदेश की सांस्कृतिक परम्पराओं व प्रकृति प्रेम आदि का चित्रण कमोवेश दोनों रचनाओं में मिलता है।

उपरोक्त विवेचन के उपरांत हम पाते है कि आदिवासी जीवन और विभिन्न क्रियाओं को आधार बनाकर लिखी दोनों पुस्तकों में कई स्तरों पर समानता है। वैसे तो एक ही विषय पर रचित दो रचनाएँ एक समान नहीं होती है। उनमें दृष्टि भेद का भी फर्क नजर आता है। यहां पर दोनों रचनाओं में लेखकों का नजरिया एक समान नहीं रहा कुछेक रचनों पर मोड़ आया है लेकिन अधिकांश स्तरों पर समान विषय वस्तु होने पर सहमत है।

जिन-जिन स्तरों पर दोनों रचनाओं में समानता दृष्टि गोचर होती है। वहां आवश्यक नहीं कि एक रचना से उल्लिखित समस्त घटनाएँ दूसरी कृति में भी हू-बू-हू मिले। अतः पूर्णतः समानता का दावा नहीं किया जा सकता है। क्योंकि विषय विवेचन में फर्क रहा है। केवल छायाभास दृष्टिगोचर होता है।

किन्ही रचनाओं में पूर्णतः समानता खोजना एक असफल प्रयास होता है। रचना चाहे किसी भी तरह की क्यों न हो? कुछेक स्तरों पर ही समानता होती है। एक ही विषय और एक ही विषयवस्तु पर केन्द्रीय विभिन्न रचनाओं में कई स्तरों पर असमानता परिलक्षित होती है। जिसके कई कारण हो सकते है। विषय वस्तु लेखक की अश्चेतना में समाहित होती है।जिसका जितना वह रचना में उल्लेख या चित्रण कर पाता वही उसकी अंतर्वस्तु कहलाती है। अब यहां यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक रचनाकार की रचना में हर एक अनुभूति स्थान पाती हो यह जरूरी नहीं है। अर्थात् रचनाकार द्वारा किसी रचना का सृजन करते वक्त उसकी कुछ सीमाएँ भी होती है।

प्रत्येक लेखक अथवा रचनाकार का स्वयं का कल्पनालोक होता है। जिसमें विचरण करते हुए अपने भावों और विचारों को यथार्थ से जोड़ने की पुरजोर कोशिश करता है। इसलिए कह सकते हैं कि केवल यथार्थ से भी रचनाएँ महान नहीं होती है। बल्कि इनके पीछे एक विचारधारा का होना आवश्यक है। चूंकि प्रत्येक रचनाकार स्वयं के स्तर पर एक सृजनकर्ता

भी होता है। अतः किसी भी विषय पर एक ही विषयवस्तु को लेकर लिखी गयी रचनाओं में विषमता होना स्वाभाविक है।

मानगढ़ के आदिवासी आंदोलन पर लिखित दोनों रचनाओं पर भी यही लागू होता है। मानगढ़ आंदोलन इतिहास भारतीय इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना है। लेकिन इतिहास के प्ररिप्रेक्ष्य में ओझल घटना है। जिस पर इतिहास मौन है। साहित्यकार इतिहास से विषय वस्तु लेता है। लेकिन इतिहास समत ही नहीं लिखता। भाव और विचार सम्प्रेषण हेतु कल्पना का योग भी आवश्यक जान पड़ता है। इसलिए साहित्यकार इतिहास परक घटनाओं को साहित्य के माध्यम से जगत के बीच लाने में काल्पनिक पात्रों का सहारा लेता है। जिसका उद्देश्य केवल सम्प्रेषण प्रक्रिया को बाधित होने से बचाना है। मानगढ़ पर घटित आदिवासी आंदोलन से संबंधित दोनों रचनाओं में विभिन्न स्तरों पर विभिन्नता है। यह भिन्नता विभिन्न स्तारिक संदर्भों में है जो इसप्रकार समझी जा सकती है।

ऐतिहासिक स्तर पर दोनों रचनाएँ मानगढ़ पर हुए आदिवासी आंदोलन और बलिदान की घटनाओं का जीवंत दस्तावेज है। फिर भी इसके निश्चित साक्ष्य अनुपलब्ध है। घटना-तिथि को लेकर करीब-करीब मतभेद ही दिखाई देता है। हरिराम मीणा अपने उपन्यास 'धूणी तपेतीर' मे यह घटना 17 नवम्बर 1913 ई0 को ठहराते है।''[34]

राजेन्द्र मोहन भटनागर, मगरी मानगढ़: गोविन्द गिरी में यही तिथि 7 दिसम्बर 1908 मानते है। चूंकि मानगढ़ आदिवासी आंदोलन इतिहास की दृष्टि में उपेक्षित रहा, इस घटना को उचित स्थान नहीं मिला। अतः विषमता साफ दिखाई देती है।

लेकिन ऐतिहासिक स्तर पर विवेच्य रचनाओं में तुलना करना थोड़ा कठिन-सा है। क्योंकि दोनों ही रचनाएँ साहित्यक है। दूसरी तरफ उस समय के पूर्णत: सही साक्ष्य उपलब्ध नहीं

हैं।बृजकिशोर शर्मा ने पुस्तक ज्तपइंस त्मअंसजे (आदिवासी विद्रोह) नामक पुस्तक लिखी। जिसमें उन्होंने यह घटना 17 नवम्बरए 1913 को मानी है। स्वं लेखक हरिराम मीणा जी ने मेवाड़ महाराणा पुस्तकालय, उदयपुर संग्रहलय, दिल्ली के संसदीय पुस्तकालय और दक्षिणी राजस्थान के स्थानीय निवासियों से मेल मुलाकात आदि साक्ष्यों के सहारे निर्णीत तिथि तर्क संगत ही दिखाई देती है। खैर इतिहास का विषय है बहस तो हो सकती है।

एक बात विशेष तौर पर कही जा सकती कि विवेच्य रचनाओं में घटनाएँ भिन्नता प्रदर्शित करती है लेकिन एक बात पर सहमति जताती है कि घटना का दिन मार्गशीर्ष पूर्णिमा था। बागड़ में यह मेला मागशीर्ष पूर्णिमा को भरता है। इसकी पुष्टि लोक संस्कृति करती है। क्योंकि मिथकों और लोकगीतों व लोकपर्वों में ऐतिहासिकता जिंदा होने का प्रमाण देती रहती है। इतिहास खूब जगहों पर मौन है लेकिन लोक वाचाल है। अतः इतिहास की मौन अवस्था का रहस्य लोक में प्रकट होता है। आज भी वह मेला मार्गशीर्ष पूर्णिमा को भरता है। भारतीय लौकिक संस्कृति मेले भरने तिथि आरंभ में भी आज भी वही है। क्योंकि वहां धार्मिक आस्था जुड़ी होती है और धर्म का जुड़ाव जनता की चितवृत्ति से है।

अतः कह सकते है कि 17 नवम्बर को मार्गशीर्ष पूर्णिमा था। इसलिए ‘‘धूणी तपेतीर’ ऐतिहासिक सिद्ध होती है।

‘धूणी तपेतीर’ उपन्यास का आरंभ गोविंद गुरु के बाल्यकाल से हुआ है।‘रास ने बाल्यावस्था को प्रारंभिक बाल्यावस्था नाम देकर उसे 6 वर्ष की आयु तक सीमा निर्धारित की है। वहीं अधिकांश मनोवैज्ञानिक बाल्यकाल को दो अवस्थाओं में बाटते है। पूर्ण बाल्यवस्था उसे 6 वर्ष तक और उत्तर बाल्यावस्था 6 से 12 वर्ष।’’[35] गोविंद गुरु अपने मित्रों के साथ जंगलों में बचपन में घुमक्कडी जीवन व्यतीत करते हैं से धूणी तपे तीर आरंभ हुआ। वहीं मगरी मानगढ़: गोविंद गिरी उपन्यास का आरंभ गोविंद गिरि के शैवावस्था से आरंभ किया। जन्म का समय मार्गशीर्ष पूर्णिमा बताया गया जबकि धूणीतपेतीर इस संदर्भ में मौन है।

धूणी तपेतीर उपन्यास में गोविंद गुरु को 'बेसर'[36]और 'लाटकी'[37] नामक दम्पति की संतान बताया गया। जबकि मगरी मानगढ़: गोविंद गिरि उपन्यास में दम्पति का नाम 'गणेश्या'[38] और 'सावंती'[39] के रूप में आया है।

'धूणी तपेतीर' में गोविन्द गुरु का आरंभिक नाम गोविंदा आया है जबकि 'मगरी मानगढ़: गोविंद गिरि' में गोविंदा।गोविन्द गुरु के नामकरण में 'धूणी तपेतीर' मौन है कि 'मगरी मानगढ़: गिविन्द गिरी' मं घुमक्कडी बाबा द्वारा नमोल्लेख हुआ है। हरिराम गीमाण 'धूणी तपेतीर' में गोविंद गुरु को अपने दीक्षा गुरु राजगिरी गोसाई व भारतीय महान समाज सुधारक दयानंद सरस्वती से प्रभावित होने का उल्लेख करते है। जिससे प्रभावित होकर स्वदेशी आंदोलन हिस्सेदारी में दिखाते है।

> **''दयानंद संत तो स्वदेशी की बात करते हैं फिर मैंने उनसे अगर कोई ज्ञान प्राप्त किया तो क्या में तुम्हारा बुरा करने वाला हूँ।''**[40]

जबकि मगरी मानगढ़: गोविंद गिरी' उपन्या समें भटनागर गोविंद गुरु को कबीर से सर्वाधिक प्रभावित मानते हे। गोविंद गुरु दयानंद सरस्वती से मिलकर आध्यात्म ज्ञान की चर्चा अवश्य करते है कि लेकिन स्वदेशी जैसी कोई विशेष बात नहीं।

'धूणी तपेतीर' उपन्यास में आदिवासी समाज में सुधार कार्यक्रम का क्रमिक विकास विभिन्न लोगों के माध्यम से दिखाने का प्रयास किया। दुर्लभराय जी, इनके समकालीन मावजी, आदि का उल्लेख यहां हुआ है। जबकि मगरी मानगढ़: गोविंद गिरि में इनका प्रमुख रूप उल्लेख नहीं किया गया।

'धूणी तपेतीर' में आपराधिक अधिनियम का लागू होने और उसके दुष्परिणामों का, भूमि बंदोबस्तीकरण का लागू करना, महाजनी सूढखोरी का खुला तांडव, रियासती रौब

दबाव ऋषभ देव और मंदिर समझौता, ब्राह्मणी संस्कृति से जकड़ते सामाजिक क्रियाकर्मों, आदिवासी समाजों के साथ डराकर, धमकाकर व फुसलाकर बहलाकर किये समझौता का उल्लेख हुआ है। जबकि मगरी मानगढ़ में इन विभिन्न गतिविधियों को न के बराबर चित्रित किया। जबकि आदिवासी समाजों की दुर्दशा के लिए यही गतिविधियां प्रमुख रूप से जिम्मेदार थी। गतिविधियों को बंद करने और खत्म करने के लिए आदिवासी आंदोलन हुए है ताकि वह अपने आदिम तरीकें से बिना किसी को हानि पहुंचाये आराम से जीवन यापन कर सके।

'धूणी तपेतीर' में विभिन्न आदिवासी समाजों का उल्लेख मिलता है। जैसे -

''हम सब लोग भील, मीणा, गारासिया हैं।''[41]

'अन्य समाजों का जिनमें घुमक्कड़ी प्रवृत्ति पायी जाती हैए का भी उल्लेख हुआ है।

कंजर, सांसी, कालबेलिया, पारधी, सिकलीधर, गाड़िया लुहार आदि अनेक मानव समूह है।''[42]

मगरी मानगढ़ः गोविंद गिरि' उपन्यास में उपरोक्त आदिवासी समुदायों का उल्लेख नहीं मिलता है। जबकि मानगढ़ आंदोलन में शेष को छोड़ भी दे तो भील, मीणा, गरासियां और डामोरों ने भाग लिया था। अतः कहा जा सकता है कि 'धूणी तपेतीर' उपन्यास ही ऐतिहासिक प्रमाणिकता की कसोटी पर खरा उतरता है।

'धूणी तपेतीर' उपन्यास के अनुसार ब्रिटिश अधिकारी वेलेसली के निर्देशन, नेतृत्त्व में मानगढ़ आंदोलन की मुख्य रणनीति तय कर इसे कुचला गया।जिसमें पीटरसन व जे.पी. स्टोक्ले उनके अन्य सहयोगी की भूमिका निभाते हैं तथा मानगढ़ पहाड़ी एकत्र आदिवासियों पर एक तयशुदा नीति के तहत आक्रमण करते है जिनमें आदिवासी उनका मुकाबला अपने

परम्परागत हथियारों से करते है जबकि मगरी मानगढ़: गोविंद गिरी उपन्याासस में अंग्रेजी सेना का नेतृत्व कर्नल शटन करता है और मानगढ़ पर एकत्र आदिवासियों पर गोलियां चलाने का आदेश फरमाता है। इस तरह घटना .तिथियो में विविधता आ गयी।

'सपसभा' के संबंध में दोनों रचनाओं में मतभेद है। मीणा इसका गठन का समय 1883 ई0 मानते है और मौलिकता के प्रश्न पर पूंजाधीरा को प्राथमिकता देते है जबकि भटनागर मोती गड़ामेड़तीया की मौलिकता पर ठप्पा लगाते है और नामकरण भी 'रुद्राक्ष सभा' से गति कर मोती गड़ामेड़तीया के साथ 'सम्य सभा' पर आकर रूक जाता है।

ऐतिहासिक एवं सामाजिक दृष्टि से मानगढ़ आंदोलन के प्रमुख आदिवासी प्रतिनिधि गोविंद गुरु अपने मौलिक स्वभाव में एक साधारण भक्त है। आदिवासी समुदाय को सम्मान के भर जीवने जीने के राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक व आर्थिक स्तर पर जागरुक करने का बीड़ा उठाते है। लेकिन कर्मशील जीवन में भक्त ही है।'धूणी तपेतीर' मं यही भक्त स्वरूप चित्रित हुआ है। जबकि मगरी मानगढ़: गोविंद गिरि में गोविंद गिरी अपने भक्त स्वरूप के साथ एक धीर ललित नायक भी है।

''वाह बदली, वाह! एकदम बिजली सी चमकती घटा ठिठोली भरा अंदाज।''[43]

बदली को पहली मुलाकात से ही गोविंद गुरु बदली के होकर रह गये दूसरी बार उठाला माता के थान पर लड़कियाँ के नाच में से बदली को पहचाना और वार्तालाप की। उसी दौरान उनकी दृष्टि का फेर हो जाता है - क्योंकि

''उसकी दृष्टि बार-बार वहीं जाकर टिकती थी। जहां से उरोजों का तनाव कुछ ढीला पडा था और बिजली की चमके कौंध रही थी।''[44] दोनों रचनाओं में नायक के नाम पर भी विषमता है 'धूणी तपेतीर' उपन्यास के नायक का नाम गोविंद गुरु है तो मगरी मानगढ़: गोविंद गिरि उपन्यास के नायक का नाम 'गोविंद गिरि' है जबकि इतिहास के संदर्भ में गोविंद गिरी है।

दोनों रचनाओं में वागड़ प्रदेश के आदिवासी समाज का चित्रण हुआ है जिसमें विशेषकर भील समुदाय का। दोनों रचनाएँ सामाजिक चित्रण में विविधता लिए हुए है। हरिराम मीणा आदिवासी समाज में व्याप्त बुराइयों का करते हैं। आदिवासी समाज की सबसे बड़ी कमजोरी नशाखोरी है जिससे वह अपने आप को गिरा लेता है। कुरिया दनोत और गोविंद के मध्य शराब को लेकर हुए वार्तालाप से स्पष्ट होता है कि शराब के सेवन घर-परिवार में आर्थिक कमजोरी के साथ-साथ अशांति का वातावरण बन जाता है। कुरिय का कथन

> **''डोकरा नशे में जब रोड़ा करता है तो घर-परिवार का**
> **क्या हाल होता है, यह तो मैं ही जानता हूँ। मुझसे तो**
> **वह ढाल पर नहीं आता।''**[45]

मगरी मानगढ़: गोविंद गिरि मे यह तथ्य इतना स्पष्टता से नहीं उभारा गया कि बल्कि गनी के माध्यम से इतना ही कहा गया है कि लड़का शराब पीने वाला नहीं होना चाहिए।

डायन प्रथा वागड प्रदेश में आदिवासी समाज में प्रचलित एक अभिशाप था। जिसे अंगरेजी सरकार ने प्रतिबंधित किया। इस प्रथा का उल्लेख केवल धूणी तपेतीर उपन्यास में ही हुआ है। मगरी मागनढ़: गोविंद गिरि में नहीं। धूणी तपेतीर में गोविंद गुरु आदिवासी क्षेत्रों में धूम-धूमकर जागरती का कार्य जिलाए रखते है लेकिन दूसरी रचना में यह कार्य बेहद कमजोर स्थिति में उभरा है। अंग्रेजी सरकार द्वारा उपाधित 'इण्डियन राबिन हुड' 'टंट्या मामा' का वृतान्त केवल धूणी तपेतीर में ही उल्लिखित है। आदिवासी समाज फुरसत के क्षणों में एक स्थान पर एकत्र होकर लोक गाथाओं से मन बहलाते और हल्कापन महसूस करते हैं इसका जिक्र भी केवल धूणी तपेतीर' में हुआ है। विधवा गनी से गोविंद गुरु दूरा विवाह करते है। जबकि मगरी मानगढ़: गोविंद गिरि की गनी कौमार्य युक्त है। अतः विधवा विवाह का समर्थन केवल धूणी तपेतीर उपन्यास ही करता है।

सोमा भक्त की बेटी अणती और पांच्या की बेटी दल्ली का बलात्कार उस वक्त से लेकर आज भी उतनी ही प्रासांगिक घटना है। दोनों को थानेदार गुल मोहम्मद को और सुबेदार लियाकत अली जैसे कुकर्मीयों को कभी क्षमा नहीं करता। दोनों अति प्रासंगिक घटनाओं का वर्णन केवल 'धूणी तपे तीर' उपन्यास में ही है।

'धूणी तपेतीर' में बेगार प्रथा का भी उल्लेख हुआ है। जिसे आदिवासी समाज अपने अनपढ़पन और अज्ञानता के कारण पुरखो द्वारा प्रायोजित और समर्थिक मानकर चलते है। जिसकी ओट में सत्ता और उस से संबंधित वर्ग समुदाय उनका शोषण करते है।गोविंद गुरु जगह-जगह घूम.घूम कर इसके प्रति सचेत करते हैं तथा कभी-कभी मौका मुआना भी कर लेते है। मगरी मानगढ़ में भी इसका चित्रण व इसके दुष्परिणाम इतने खुलकर मुखरित नहीं होते हैं।

आदिवासी प्रमुखतः आदिदेव भोलेनाथ के भक्त है। दोनों रचनाओं में समान रूप से भोलेनाथ की पूजा.आराधना का जिक्र हुआ है। धूणी तपेतीर में आदिवासी समाज को अपने देवों को पुकारते मानते चित्रित किया है। मगरी मानगढ़ में पौराणिक कथा भक्त प्रवर प्रहलाद और हिरण्यकश्यप का उल्लेख हुआ है। साथ दादू दयाल और भक्त कवयित्री मीरां का भी उल्लेख हुआ है जबकि धूती तपेतीर मे इनका उल्लेख नहीं हुआ है।धूणी तेपे तीर में भूत-प्रेम विद्या और इन्द्रजाल विद्या के संदर्भ मेंबातें हुई है। गोविंद गुरु अपने प्रवचनों में तुलसी समर्थिक 'दया धर्म को मूल' का समर्थन करते है कि जबकि मगरी मानगढ़ में गोविंद कबीर के दोहों का अत्याधिक उपयोग करते हैं।

गोविंद गुरु द्वारा रचित भजन का भी उल्लेख हुआ है -

''जाबु जागों तरेह ने आजन वाज-बाग है
जाबु में हकारों पड़ है ने आजन बाग है''[46]

मगरी मानगढ़ में गोविंद गुरु द्वारा कोई भजन रचने का उल्लेख नहीं हुआ। गन्नी भजन गाती है। यह इसकी अनूठी विशेषता है जो धूणी तपेतीर नहीं है। यह लेखक की कल्पना हो

सकती है। आदिवासी समुदाय के एक औरत का गाना उस वक्त की परिस्थितियों के प्रतिकुल जान पड़ता है।

विवेच्य रचनाओं में राजनैतिक स्तर पर विषमता है। क्योंकि दोनों रचनाओं की घटनाओं में भिन्नता प्रदर्शित है साथही घटना तिथि में भी। इसी कारण राजनैतिक स्तरपर कई मोड़-पड़ावों का उल्लेख हुआ हे। हरिराम मीणा के उपन्यास 'धूणी तपेतीर' के तत्कालीन शासकों का उल्लेख हुआ है। मेवाड़ महाराणा फतह सिंह, बांसवाड़ा के महारावल लक्ष्मण सिंह, शुंभूसिंह, प्रतापगढ़ केमहारावल उदयसिंह, रधुनाथसिंह व विजयसिंह, डुगरपुर महारावाल विजय सिंह, उदयपुर महाराणा सज्जन सिंह जागदीदारों में हिम्मत सिंह (गूढ़ा), ठाकुर पृथ्वीसिंह (इंडररियासत) आदि शासकों व जागदीरों का उल्लेख हुआ है। साथ ही राजस्थान के महान इतिहासकार कविराजा श्यामल दास का भी जिक्र हुआ है।

'मगरी मानगढ़ में भी तत्कालीन सताधीशों का उल्लेख हुआ है। डूंगरपुर राज्य के शासन को संभालने हेतु अधिकृत कार्यवाहक राजमाता व अल्पवयस्क महारावल विजय सिंह, शासन सलाहकार के रूप में नरपत सिंह, बांसवाडा शासक शुंभू सिंह, महामंत्री नाहर सिंह, उपसेनापति देवी सिंह, जयसिंह आदि का उल्लेख हुआ है'।[47]

बागड़ प्रदेश के आदिवासियों का कई तरह से शोषण किया जाता है। जिनका उद्घाटन उक्त रचनाओं में भिन्न-भिन्न रूपों में हुआ है। मगरी मानगढ़ में पाठशालाओं के बंद कराने का उल्लेख हुआ है। धूणी तपेतीर में धूणियों को मांस-मदिरा से अपवित्र करने की घटनाएं सामने आती है।

आदिवासी समाज पर शताब्दियों से शोषण का भार डाला हुआ है। रेलगाडी के लाइन बिछाने के कार्य में आदिवासी समाजों की जमीन से बेदखल किया। उसी के समानान्तर 'राज की गैल' की बात सामने आयी। आदिवासी समुह महाराणा सज्जन सिंह के सम्मुख

कहते है। जागीदरों के नाई द्वारा हमारे बुजुर्ग लोगों के सिर उस्तरा लगाकर दो अंगूल चैडी पट्टी बना दी जाती है। पूछने पर उसे राज की गैल बताते है। इस गैल पर तो कोई चल भी नहीं सकता।

"... नाई बालों को ललाट से निचे से चोटी तक दो दो अंगुल की चौडाई में उस्तरा लगा कर कटते हैं।पूछने पर कहते हैं की यह राज की गेल है।"[48]

दोनों रचनाओं में वागड़ प्रदेश की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति खुलकर व्यक्त हुई। आदिवासी समाज द्वारा मनाये जाने वाले विभिन्न त्योहारों व मेलों का उल्लेख हुआ है। विभिन्न गीतों का संयोजन धूणी तपे तीर के उपन्यास व मगरी मनगढ रूगोविन्द गिरि में स्पष्ट रूप से हुआ है दिखाई देता है। जैसे -

1. ''काली कोयलडी ते वन बगडे ने गायी ती रे।''[49]
2. ''डूबे रे काजली चुवी चुवी जाय।''[50]
3. ''हूँ..... ऐ..... ही..... डो''[51]
4. ''होली बाई वांहो रो रे।''[52]
5. ''हरिया बाई बाहो रो रे।''[53]
6. भाईया थूर वाजी रे जी कानहैग डुरमाल रे।''[54]

इसप्रकार विभिन्न प्रकार के लोकगीतों का उल्लेख हुआ है। इन गीतों के साथ-साथ आदिवासी समाज के विभिन्न नृत्यों का नामोल्लेख हुआ है -

''हाथजोड़िया पगपासणियाना, जालणियाना, उडविमाना, पादुकचाला, मुरिया, गैर-गवरी आदि।''[55]

गवरी नृत्य पुरूषों द्वारा किया जाता है जबकि उडणियाना नृत्य में केवल युवतियाँ ही भाग लेती है। जबकि मूरिया नृत्य सामूहिक नृत्य है जिसमें युवक युवतियाँ एक दूसरे के हाथों को थाम कर नाचते है और विभिन्न करतबों का आयोजन होता है।

मगरी मानगढ़ में भी लोकगीतों का उललेख हुआ है। लेकिन इनका इतना मोहक चित्रण नहीं हुआ।

भाषा पक्ष

'धूणी तपेतीर' उपन्यास में लेखने ने अपनी कथा विस्तार हेतु विभिन्न शैलियों का प्रयोग किया है। विशेष रूप से कथा शैली का सबसे अधिक उपयोग हुआ। कथावस्तु का गतिमान व पाठकों को जोड़े रखने के लिए विभिन्न लोक कथाओं का संयोजन किया गया। मेगड़ी विवाह सृष्टि निर्माण की कथा, लाखा बनजारा की कथा हीडा की कथा, राणा दीवाण और जेलूनार की कथा आदि कथाओं के कहने के लिए लोक शैली का पक्ष लिया गया। गजब का प्रकृति चित्रण है।

'धूणी तपेतीर' उपन्यास में बिम्ब परक शब्दावली का भी प्रयोग हुआ है। एकउदाहरण

''बरगद के वृक्ष की तरह गोविंद गुरु का व्यक्तित्व विकसित हुआ।संप सभा की बैठक रूपी टहनियों पर भगत व अन्य अनुयायी रूपी पते फैलते गए।''[56]

रामगोपाल के अनुसार 'भाषिक स्तर पर 'धूणी तपेतीर उपन्यास ने हिन्दी उपन्यास के लिए भावी संभनाओं के द्वारा खोले है।[57] लेखक विभिन्न स्थलों और स्तरों का ध्यान में रखते हुए उचित भाषा का प्रयोग किया। पात्र और देशकाल के अनुकूल ही भाषा का प्रयोग हुआ है। जैसे डोकरा, बाट, गमेती, हेला, सौण टीपना आदि स्थानीय शब्दावली का प्रयोग हुआ है। साथ ही उर्दू फारसी शब्दों का प्रयोग किया। मार्फत, मुताबिक, चुनिंदा, जवानी, तयशुदा, दिलो-दिमाग, वजह, इलाके, सहूलियत, पसंद, लिहाज आदि।

भाषा पर लेखक का अचूक अधिकार सा दिखाई देता। कहीं कहीं पत्रकारिता युक्त भाषा का प्रयोग हुआ है जो ऐतिहासिक घटनाओं के ब्यौरे प्रस्तुत करते वक्त दिखाई देता है। सम्प्रेक्षण में सहूलियत रहे इसलिए कही कही फुटनाटे भी दिए है। गीतात्मक शैली का प्रयोग हुआ। साथ ही लोकोक्तियों व मुहावरों का प्रयोग भी हुआ है। जैसे- पो फटने से पहले ही, फूट-फूट कर रोना, सीधी अंगूली से घी नहीं निकलना।

इस प्रकार धूणी तपेतीर उपन्यास में भाषा में सहज-सरलता के साथ नजाकत-नफासत झलती है। अर्थ सम्प्रेण आसानी से हो जाता है। संवाद उत्तम कोटी के हैं।

मगरी मानगढ़: उपन्यास में लेखक ने विभिन्न शैलियों से घटनाओं का ताना-बाना-बुना है। विशेष रूप से कथा शैली का सहारा लिया गया है। भाषा पात्रानुकूल है। गोविन्द गुरु आदिवासियों के आदर्श नायक होने के साथ रसिक नायक है। इसलिए बदली और गनी के साथ रसिक प्रेमालाप भी हुआ है। स्थानीय भाषा का खुला प्रयोग है। जैसे -

'ये म्हारा मण इती जल्दी समझ गया क्यों?''[58]

दूसरी तरफ रसिक प्रेमभरा वार्तालाप होता है जब उनकी दृष्टि बदली का नाभी पर जा अटकती है जहां उसका घाघरा नाभी से थोडा नीचे बंधा हुआ था वह बोला उठते है

''**ना-ना बदली**, **म्हारे कूँ थे ऐसा मत समझा**''[59]

लेखक ने अंग्रेजी अधिकारियों की भाषा अंग्रेजी ध्वनि से प्रभावित दिखाई है - 'टुम्हारा ये हवन .... धाँणी यज्ञ ढोंग है।टाकिटुम भील राजा बनकर यहाँ हुकूमट कर सको।''[60]

उपन्यास में स्थानीय अथवा आंचलिता युक्त शब्द प्रयोग अधिक किए है। जैसे थान, चबूतरा, डगर, म्हारा, ओवरा, घणी आदि के साथ मुहावरों व लोकोक्तियों का यथा स्थान पर प्रयोग हुआ है। सब अपनों-आपणों हवा रथा हारा ताके है, आज वार है तो काले कवार भी है,

एक सौ एक नुक्स निकालना, आसमान के तारे माँगना आदि उपन्यास में अंग्रेजी शब्दों का खूब प्रयोग हुआ है -

''यू डू नाट यू वरि.... प्लीज रिमैबर दि ट्रुथ विल सर्टेलि कम आउट सून आफ लैटर?''[61]

मानगढ आंदोलन पर आधारित दोनों रचनाओं के विवेचनोपरांत हम पाते है कि साम्यअधिक वैषम्य कम है। लेकिन ऐतिहासिक कथावस्तु होने के नाते 'धूणि तपेतीर' अपने स्तर पर ज्यादा घटनाओं को समेटे चलता है। लोक साझी संस्कृति का चित्रण अधिक हुआ वहीं ऐतिहासिकता पर भी खरा उतरता है। फिर भी दोनों रचनाएँ अपने-अपने स्तर पर महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। यहां कुछेक पहलुओं का आधार बनाकर विवेचन किया गया बशर्ते एक अलग ही पुस्तक इस विषय को लेकर लिखी जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. मीणा, हरिराम, धूणी तपेतीर, साहित्य उपक्रम समिति, दिल्ली, सं0 2013, पृ0 162
2. भटनागर, राजेन्द्र मोहन, मगरी मानगढ़, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2011, पृ0 215
3. शर्मा बृजकिशोर, आदिवासी विद्रोह, पांइटर प्रकाशन जयपुर, सं0 2008, पृ0 119
4. मीणा हरिराम, धूणी तपेतीर, साहित्य उपक्रम समिति, दिल्ली, सं0 2013, पृ0 28
5. भटनागर, राजेन्द्र मोहन, मगरी मानगढ़, वाणी प्रकाशन, दिल्ली सं0 2011, पृ0 20
6. मीणा हरिराम, धूणी तपे, तीर साहित्य उपक्रम समिति, दिल्ली, सं0 2013, पृ0 152
7. भटनागर, राजेन्द्र मोहन, मगरी मानगढ़, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2011, पृ0 206
8. मीणा, पिन्टु कुमार, मानगढ़ आंदोलन केन्द्रीत हिन्दी साहित्य, अलख प्रकाशन जयपुर, सं0 2013, पृ0 83
9. भटनागर, राजेन्द्र मोहन, मगरी मानगढ़, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2011, पृ0 209
10. वही, पृ0 157
11. मीणा, हरिराम, धूणी तपेतीर, साहित्य उपक्रम समिति, दिल्ली ,सं0 2013, पृ0 345
12. भटनागर, राजेन्द्र मोहन, मगरी मानगढ़, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2011, पृ0 26
13. गुप्ता, रमणिका, आदिवासी लेखन एक उभरती चेतना, सामयिक प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2013, पृ0 16
14. मीणा, हरिराम, धूणी तपे,तीर साहित्य उपक्रम समिति ,दिल्ली ,सं0 2013, पृ0 26
15. वहीं, पृ0 105
16. वही, पृ0 108
17. भटनागर, राजेन्द्र मोहन, मगरी मानगढ़, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2011, पृ0 98
18. मीणा, हरिराम, धूणी तपेतीर साहित्य उपक्रम समिति, दिल्ली, सं0 2013, पृ0 70
19. वही, पृ0 70

20. वही, पृ0 70

21. भटनागर, राजेन्द्र मोहन, मगरी मानगढ़, वाणी प्रकाशन, दिल्ली सं0 2011, पृ0 39

22. वही, पृ0 39

23. वही, पृ0 50

24. मीणा, हरिराम, धूणी तपे,तीर, साहित्य उपक्रम समिति, दिल्ली सं0 2013, पृ0 34

25. भटनागर, राजेन्द्र मोहन, मगरी मानगढ़, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2011, पृ0 51

26. मीणा, हरिराम, धूणी तपेतीर, साहित्य उपक्रम समिति, दिल्ली, सं0 2013, पृ0 245

27. भटनागर, राजेन्द्र मोहन, मगरी मानगढ़, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2011, पृ0 121

28. वही, पृ0 124

29. अमरनाथ, हिन्दी आलोचना की परिभाषित शब्दावली (उद्धत), राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2016, पृ0 282

30. मीणा, पिंटू कुमार,मानगढ़ आन्दोलन कन्द्रीत हिंदी साहित्य, अलख प्रकाशन जयपुर,सं. 2013, पृष्ट 87, 88

31. मीणा, हरिराम, धूणी तपेतीर,साहित्य उपक्रम समिति, दिल्ली, सं0 2013, पृ0 204

32. भटनागर, राजेन्द्र मोहन, मगरी मानगढ़, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2011, पृ0 129

33. वी. कृष्ण व भीमा सिंह (संपादक): आदिवासी विमर्श, स्वराज प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2014, पृ0 सं0 90

34. मीणा, हरिराम, धूणी तपेतीर, साहित्य उपक्रम समिति, दिल्ली ,सं0 2013, पृ0 357

35. अनिल गुप्ता (सं0), शिक्षा के मनोवैज्ञानिक आधार, कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा, पृ0 70-71

36. मीणा, हरिराम, धूणी तपे,तीर साहित्य उपक्रम समिति, दिल्ली, सं0 2013, पृ0 24

37. वही, पृ0 24

38. भटनागर, राजेन्द्र मोहन, मगरी मानगढ़, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2011, पृ0 12

39. वहीं, पृ0 12

40. मीणा, हरिराम, धूणी तपेतीर, साहित्य उपक्रम समिति, दिल्ली, सं0 2013, पृ0 82

41. वही, पृ0 80

42 वही, पृ0 115

43. भटनागर, राजेन्द्र मोहन, मगरी मानगढ़, वाणी प्रकाशन, दिल्ली,सं0 2011, पृ0 54

44. वही, पृ0 92

45. मीणा, हरिराम, धूणी तपेतीर, साहित्य उपक्रम समिति, दिल्ली,सं0 2013, पृ0 29

46 वही, पृ0 229

47. मीणा, पिन्टु कुमार, मानगढ़ आंदोलन केन्द्रित हिन्दी साहित्य, अलख प्रकाशन, जयपुर 2013, पृ0 93

48. मीणा, हरिराम, धूणी तपेतीर ,साहित्य उपक्रम समिति, दिल्ली, सं0 2013, पृ0 49-50

49 वही, पृ0 204

50 वही, पृ0 251

51 वही, पृ0 282

52 वही, पृ0 321

53. वही, पृ0 342

54. वही, पृ0 143

55 वही, पृ0 204

56. वही, पृ0 374

57 मीणा, रामगोपाल, हिंदी संवाद सेतु पत्रिका, अप्रैल-सितम्बर, पृ0 42

58 भटनागर, राजेन्द्र मोहन, मगरी मानगढ़, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2011, पृ0 91

59 वही, पृ0 92

60 वही, पृ0 209

61. वही, पृ0 196